P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

आम जनता का कवि : अरुण कमल

विजेन्द्र कुमार
सहायक प्रवक्ता,
हिन्दी विभाग,
आसनसोल गर्ल्स कॉलेज,
आसनसोल
पश्चिम बर्द्धमान,
प0 बं0, भारत

सारांश

अरुण कमल आठवें–नौवें दशक के समकालीन कवियों में एक बड़ा नाम है। इनका काव्य फलक चार दशकों का फैलाव है। इनकी कविता अपने समय, समाज के साथ न्याय करती हुई भविष्य की संघर्षशीलता को बानगी देती है। समसामयिक सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व साम्प्रदायिक समस्याओं, विसागतियों, विकृतियों के यथार्थ को उजागर करती अरुण कमल की कविता समाज को सभ्य व सचेत होने का अर्थ गौरव प्रदान करती है। वर्तमान बाजारवादी दौर में भूख, गरीबी, दरिद्रता बेरोजगारी जैसी फन काढ़ी विकराल समस्याओं से संघर्षरत समाज का सर्वहारा वर्ग, अपसंस्कृति के बढ़ते कदम में आम जनता की बढ़ती आत्मकेन्द्रिकता, संकीर्णता, स्वार्थपरता, संवेदनात्मक शून्यता जैसी विकराल होती समस्याओं के बीच खड़ी अरुण कमल की कविता काले स्याह की जगह सुनहरे भविष्य की ओर संकेत करती है।

मुख्य शब्द : गरीबी, शोषण, मेहनतकश, समाज, बाजारवाद।

प्रस्तावना

अरुण कमल की कविताएँ जीवन विवेक के अधिक समृद्ध होने का प्रमाण प्रस्तुत करती है। जीवन का संवेदनशील लेखा–जोखा इनकी कविताओं का मूल प्राणतत्व है। मध्यवर्गीय और निम्नवर्गीय स्थिति की पकड़ अरुण कमल की कविताओं की प्रमुख विशेषता है। अरुण कमल सामान्य जनता के पक्षधर कवि हैं। इसलिए उनकी कविताओं में शोषित, निर्धन, गरीब, खून–पसीना बहाने वाले मेहनतकश, समाज का यथार्थ–वृतांत उनकी कविता में मौजूद है। उनकी कविता में इस वर्ग विशेष के कई संघर्ष स्पष्टतः दिखाई पड़ते हैं जिसमें मजदूरों के विस्थापन का दंश, अपनी जमीन से उजड़ने का दर्द, रोजी–रोटी के लिए अमीरों का चौका–बर्तन करना, पेट की क्षुधा मिटाने के लिए दर्जिन का काम, खेत में मजदूरी करनेवाला गरीब किसान, भटकते पुल बनाते हुए मजदूर, प्रांतवाद और भाषावाद जैसी विभेदनकारी–दमनकारी विकृत राजनीति का शिकार होता साधारण मजदूर आदि अरुण कमल की कविता के उपजीव्य हैं जिसे जीवंत आकार देकर अरुण कमल आधुनिक हिन्दी कविता में अपना स्थान निर्धारित कर पाते हैं।

पूँजीवादी व्यवस्था में कड़ी मेहनत मजदूरी करने के बावजूद इस सर्वहारा वर्ग की संरचना में कोई विशेष फेरबदल नजर तो नहीं आता है। समाज में फैली असमानता और विषमता की खाई इस बीच इतनी चौड़ी हुई कि इस वर्ग विशेष के हिस्से में केवल और केवल अभाव, गरीबी, दरिद्रता के बीच ही इसे जीवन गुजारना पड़ रहा है। उत्तरआधुनिक संकल्पना में इनकी अस्मिता असुरक्षित है। ऐसे में अरुण कमल की कविता वर्तमान व्यवस्था की हकीकत को बेनकाब करती हुई अभाव और संकट से पाठकों को न सिर्फ रू–ब–रू कराती है बल्कि भविष्य के प्रति संघर्ष करने के लिए एक ईमानदार पहल है। सिर्फ वर्तमान को बेहतर और भविष्य को सुंदर बनाने की कोशिश ही समकालीन साहित्य की धड़कन है और यही उसे सर्वकालीक भी बनाती है। ''अरुण कमल की कविता में कल की विफलता एक बेचैन आवेग की तरह भरी हुई है। आज स्थिति क्या है, हालात कैसे हैं और किस तरफ जा रहे हैं और क्यों, इसके साथ कल की कैसी सूरत बन रही है – इन उद्वेलित करने वाले प्रश्नों से अरुण कमल की कविता लथ–पथ है।''[1] वर्तमान के पतनशील सामाजिक परिवेश में कवि की चिंता अत्यधिक गहरी और विश्वसनीय है। इस वर्ग विशेष के प्रति इनकी जीवटता व संघर्षशीलता उन्हें विशिष्ट कवि बनाती है।

कविता अपने समय की अनुगूँज होती है जिसमें परस्पर विरोधी परिस्थितियों के बीच जी रहे आदमी को अंतर्वेदनाओं की ध्वनियाँ समाहित होती है। कवि समाज की पीड़ा को अनुभव करता है और उसका कोई भी दर्द निजी नहीं होता है। तभी तो अरुण कमल की गहरी आस्था देश के सामान्य जन के प्रति है। वह इस जनता के अधिकारों कर्तव्यों, उनके हकों की माँग करते हुए

उनके सुख–दुःख में शामिल होकर उनकी संघर्षशीलता पर पूरा विश्वास करते हैं। सच कहे तो दुनिया में जिस किसी हिस्से में यह तबका बसा अपना दर्दभरा जीवन गुजार रहा है या कहें तो उत्पीड़ित व शोषित है वह उसे अपनी कविता का उत्स बना लेते हैं तथा तब उनकी कविता भी सोद्देश्यपरक बन जाती है। इस मेहनतकश वर्ग और तबके को उसके अधिकार, न्याय और स्वतंत्रता प्राप्ति का आकांक्षी कवि अपनी जन–पक्षधरता का प्रमाण अपनी कविता से प्रदान करता है –

''एक ही तो हमारे लक्ष्य/एक ही तो हमारी मुक्ति
साथ–साथ मिलकर चलेंगे हम/जहाँ गिरोगे तुम
वहीं रहेंगे हम/जहाँ झुकोगे तुम/वहीं उठेंगे हम
लाओ, मुझे दो अपने हाथ/चलो मेरे पाँवों से चलो।''[2]

जैसा कि कवि समाज का अभिन्न अंग व प्रतिनिधि होता है। ऐसे में कवि मेहनतकश वर्ग के शोषण, गरीबी, अन्याय, दुःख–दर्द को अपना दुःख दर्द स्वीकार कर वह उनके साथ मिलकर मुक्ति संघर्ष करना चाहता है। असल में एक सच्चा सर्जक हमेशा अपनी कलम से थके, हारे, असफल लोगों की आवाज बनता है। वह कभी भी पूँजीवाद का समर्थन नहीं करता है। उसकी सारी चेतना व दृष्टि इस वर्ग विशेष के उत्थान में स्निहित होती है और इसी में समाज तथा राष्ट्र की प्रगति समाहित होती है। अरुण कमल मानो इसी वर्ग व समाज से बहुत कुछ अर्जित करते हैं। उनके दुःख–दर्द गरीबी विपन्नता को सीधे–सीधे अपना स्वीकार करना उसकी यातना और पीड़ा के द्वारा अपने अंतस को माजना व सँवारना अर्थात् जो कुछ भी कवि के पास सुरक्षित और प्रेरणा प्रदत्त है वह सब कुछ इस वर्ग और तबके की दी हुई अनुभूत सामग्री है। यही कारण है कि कवि इनके श्रम और मेहनत को भूलता नहीं है। अरुण कमल का मानना रहा है कि जीवन में जो कुछ भी उसे अर्जित किया है उसका सारा श्रेय इस मेहनतकश समाज को जाता है –

''तुम्हीं ने तो रोपा हमें/तुम्हारा ही रक्त तो अंकुर रहा
हमारी धमनियों में/तुम्हीं तो झाँक रहे हो
हमारे इस चेहरे में/अनेक अधुरी इच्छाओं ने तुम्हें
दिलाया है हममें विश्वास।''[3]

अरुण कमल शोषण के खिलाफ तथा दुःख भोगते आम आदमी के कवि हैं। कवि का चिंतन समाजपरक होता है। समाज में समता, खुशहाली बनाएँ रखना उसकी प्रतिबद्धता होती है। वैश्विक पूंजीवाद व्यक्ति की प्रोन्नति और भौतिक सुख का पोषक होता है। ऐसे में स्वाभाविक है उसकी नीतियां धनाढ्य वर्ग को अधिक फलीभूत करती है। पर सर्वहारा वर्ग के जीवन के विविध पहलुओं को जिस तरह अरुण कमल चित्रित करते हैं वह उन्हें और अधिक ऊर्जावान बनाता चलता है। प्रेमरंजन अनिमेष ने उनके संबंध में बड़ा सटीक लिखा है – "अत्यंत साधारण लोग, चरित्र, जीवन स्थितियाँ, कार्य–व्यापार और दैनन्दिन की मामूली–सी धूल–मिट्टी चढ़ी बातें और चीजें उनकी कविता में अपना अलौकिक अतरंग प्रकाशित करती हैं और उनसे गुजरने वालों को भी वैसा ही अहसास होता है जैसा कवि को स्वयं।''4 ऐसे में स्वाभाविक है कि अरुण कमल समाज के उत्पीड़ित, उपेक्षित, कमजोर, दलित के पक्ष में खड़े रहकर अपनी जनपक्षधरता का प्रमाण देते हैं।

वर्तमान समय पूँजीवादी जनतांत्रिक व्यवस्था का है। आज पूँजी जिसके पास है सत्ता उसके साथ है। स्थितियाँ ऐसी है कि इस व्यवस्था में केवल पूँजीपतियों का ही हित–संबंधित किया जाता है। जिसमें विशेषकर सत्ताधारी लोग, राजनेता, सामंती मानसिकता के ठेकेदार, भू–माफिया आदि तमाम ऐसे लोग हैं जो संवेदनशीलता और मानवता का झूठा प्रलोभन देकर श्रमशील वर्ग का न सिर्फ दोहन करते हैं बल्कि वह उन्हें उनके मौलिक अधिकारों से भी वंचित करते हैं। यह बदस्तूर अब भी जस का तस बना हुआ या फिर जारी है। स्वतंत्रता, समता और न्याय के बहाने केवल उनके साथ छलावा व धोखा किया गया है। यह जनतांत्रिक पूँजीवादी व्यवस्था अपने हित व स्वार्थ के लिए केवल उन्हें एक साधन की तरह अनवरत इस्तेमाल करती रही है। उनका शारीरिक व मानसिक शोषण आम बात है। पर श्रमजीवी समाज के भीतर का सपना भरा नहीं है। कवि अरुण कमल इनके भीतर के आशावादी स्वर को बड़ी शिद्धत से पहचानते हुए उनके स्वप्न और समानता पर कलम चलाते हुए लिखते हैं –

''खत्म नहीं होंगे आदिम आदर्श
खत्म नहीं होगा स्वतंत्रता समानता का स्वप्न
मनुष्य अभी पूरा स्वतंत्र नहीं हुआ
समानता का लक्ष्य अभी पूर्ण नहीं हुआ
खत्म नहीं होगा स्वतंत्रता समानता का स्वप्न
जो उतना ही झूठ है उतना ही सच
जितना कि शून्य जितना अनंत –
तब, खड़े होंगे करोड़ों–करोड़ एक साथ
और चलेंगे सब प्रकाश की ओर।''5

साधारण जन की आकांक्षा, और स्वतंत्रता का स्वप्न अभी खत्म नहीं हुआ है। उनका स्वप्न उतना ही व्यापक और समय का सच है जितना की शून्य अथवा अनंत। जो जनसंघर्ष में तब्दील हो रहा है। अरुण कमल आम आदमी के संघर्षी जीवन में विश्वास करते हैं। उनकी सहनशीलता, धैर्य, पराक्रम पर उन्हें पूरा भरोसा है। कवि दृढ़ प्रतिज्ञ है कि इन बेवसों, किसानों, मजदूरों, दलितों की दुनिया एक न एक दिन अवश्य बदलेगी। और यह संभव भी तभी है जब कि यह मेहनतकश समाज एकबद्ध होकर अपने अधिकार व कर्तव्य को अपना समझेगा, अपने अस्तित्व, स्वाभिमान और स्वतंत्रता को महसूस करने लगेगा तभी वह शोषणकारी व्यवस्था और तानाशाही व पूँजीवादी दुचक्र से मुक्त हो पायेगा। कवि अरुण कमल इस एकजुटता को स्वीकार करते हुए लिखते हैं – "आज पूँजी और श्रमशक्ति दोनों अबाध गति से पूरे भूमंडल में संचरण कर रहे हैं। इसका अर्थ यह भी है कि पूँजीवादी के विरोध की शक्तियाँ भी एक साथ पूरे भूमंडल में फैल सकती है। हम पीछे नहीं लौट सकते। जरूरत इस बात की है कि जो लोग नया संसार–समानता–स्वतंत्रता के मूल्यों पर आधारित शोषणमुक्त संसार बनाना चाहते हैं वे भी एकजुट हो। ऐसी कोशिशें चल रही हैं।''6

समाज परिवर्तन के लिए क्रांतियों का होना जरूरी है। पर बनी–बनाई व्यवस्था पर आक्रमण करना मेहनतकश समाज के लिए संभव नहीं है। इस व्यवस्था के

परिचालक पूँजीपति ठेकेदार इनके पास इतनी क्षमता और सामर्थ्य कि सर्वहारा वर्ग इनका कुछ भी विगाड़ नहीं सकता है बल्कि सर्वहारा वर्ग के भीतर इतना भय और वह इतना सहमा हुआ रहता है कि वह कभी इनके खिलाफ जाने की सोचता ही नहीं है। फलतः जनशक्ति और संगठित होना बहुत दूर की चीज है। पूँजीवादी ताकतों से लोहा लेना वर्तमान समय में सर्वहारा वर्ग के लिए बड़ी चुनौती है। पर समय सचेत होना भी जरुरी है समय के साथ चलना यानी अपने अधिकार के लिए संगठित होना व्यवस्था से लोहा लेना नहीं है। इस बात को सर्वहारा वर्ग नहीं समझता है। इसलिए कवि महसूस करते हैं कि उसे निरंतर जागते रहने की जरूरत है।

''जगे रहो/सोना नहीं है आज की रात
जलाए रहो लालटेन रातभर।''[7]

अमूमन सर्वहारा वर्ग अपने जीवन में तमाम उतार–चढ़ाव को देखता है इनका दलन और पतन होता है उसके खिलाफ भी वह चुप्पी साधे रहता है मुँह खोलना मानो अपनी हत्या करवाना है ऐसा यह समझ बैठता है। अत्याचार, अन्याय सहती जनता को देखकर कवि न सिर्फ बेचैन होता है बल्कि वह बौखला उठता है। कवि जनता से सीधे सवाल जवाब कर बैठता है कि आखिर तुम चुप क्यों हो? यह ठीक है कि वर्तमान समाज की फिसलन में व्यक्ति आत्म–केंद्रित बन गया है पिछलग्गू बन गया है। अपने स्वार्थ के आगे न उसे अपने परिवार की सुध है न समाज की और न तो राष्ट्र की। पर इस स्वार्थवृत्ति से क्या उसके समाज और परिवार का भला हो सकता है। प्रश्न कवि के मन में यहाँ है? जिसे सर्वहारा वर्ग समझना नहीं चाहता है या फिर समझकर चुप रहना ज्यादा हितकर मानता है। समय की इस विषमता और विसंगति को देखकर कवि क्षुब्ध होता है और इस मेहनतकश समाज के भीतर बढ़ती इस प्रवृत्ति पर अपनी चिंता चाहिर करते हुए लिखता है –

''जहाँ कहीं दुख में है आदमी
जहाँ कहीं मुक्ति के लिए लड़ता है आदमी
वहाँ कुछ भी नहीं है निजी
कुछ भी नहीं है गुप्त
फिर भी तुम चुप क्यों हो?''[8]

कवि आम–आदमी के भीतर संघर्षशील चेतना भरने के लिए उद्विग्न है। परिवेशगत असमानता, विषमता, शोषण के खिलाफ सर्वहारा वर्ग की चुप्पी के भाव को तोड़ना मानो उनकी कविता का मूल ध्येय है। उनका मानना है कि दलितों, गरीबों, मेहनत–मजदूरी करने वालों लोगों के पास खोने के लिए कुछ भी नहीं है। इसलिए उसे जो कुछ भी प्राप्त करना है उसके लिए उसे स्वतः और संगठित रूप में संघर्ष करना होगा, इस समाज को कोई दूसरा करके देगा नहीं –

''मुझे किसी का डर नहीं/जो कुछ खोना था खो चुका
जो कुछ पाना है वह कोई देगा नहीं।''[9]

कवि इस वर्ग के भीतर चेतना पैदा करता है। कवि का मानना है कि इस बाजारी पूँजीवादी व्यवस्था ने भूख, गरीबी, दरिद्रता, अभाव ने इसे पहले से मारकर रखा है और बस, अब कोई क्या मारेगा। बहुत होगा जान से मार देंगे और बचा ही क्या है मरने के लिए –

''वे हद से हद मुझे मार देंगे
इससे अधिक कोई किसी
का कुछ कर भी नहीं सकता
वे एक भीखमंगे को उसके पुरखों
के पाप की सजा देंगे
एक लोथ को फाँसी।''[10]

वाकई इस समाज को समय, कर्मों की उलाहना को भूलाकर बस अब जरूरत है नये उत्साह, ऊर्जा और एक नये भावबोध की, तभी संघर्ष प्रेरणादायक बनेगा । कवि श्रम शील समाज के भीतर प्रेरणा भरता हुआ लिखता है––

''बहुत हुआ बहुत रोये–गाये/अब साझ हो रही है
बत्ती जलाओ और शुरू करो फिर वही पाठ
वहीं जहाँ छोड़ा था कल।''[11]

अध्ययन का उदेश्य

बाजारवादी दौर में समाज जिस द्रुतगति के साथ बदल रहा है ऐसे में मनुष्य की जरूरतों में बदलाव आया है पर इस बदलाव की प्रक्रिया में सबसे अधिक नुकसान यदि किसी वर्ग या तबके का हुआ है तो यह श्रम शील समाज है जो अपने हाथों से दुनिया की बड़ी–बड़ी इमारतों को गढता है पर इसका भोग करना उसके लिए आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान नहीं करता फलतः वह गरीबी बेबसी का जीवन गुजार कर संसार से अपने जीवन की मुक्ति स्वीकार कर लेता है इसी मुक्ति को केंद्र में रखकर अरुण कमल अपनी कविता को करते हैं तथा इस वर्ग के वास्तविक उद्देश्य को अपनी कविता में स्थान देकर श्रम शील समाज को एक नई जीवन दृष्टि प्रदान करते हैं ।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि अरुण कमल की कविता मेहनतकश श्रमशील समाज का आईना है जिसमें श्रमशील लोगों की रोजी रोटी के लिए चल रहे एकबद्ध संघर्ष, उनकी अभावग्रस्त जिंदगी, पूँजीवादी मानसिकता से मुक्ति तथा हताशा, निराशा के बीच मनुष्य जीवन के प्रति प्रेम जगाती, संघर्ष की प्रेरणा देती अरुण कमल की कविता वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अपनी उपस्थिति दर्ज कराती है। अरुण कमल की कविता समय की हकीकत को समेटे संघर्षशील मनुष्य की गाथा है।

अंत टिप्पणी

1. *अनिमेष प्रेमरंजन– सं0 प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2016, पृ0–15*
2. *कमल अरुण – अपनी केवल धार, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण–1996, पृ0–51*
3. *वही0, पृ0–50*
4. *अनिमेष प्रेमरंजन – सं0 प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2016, पृ0–09*
5. *कमल अरुण – नये इलाके में, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–1999, पृ0–88–89*
6. *कमल अरुण – कथोपकथन, दिसम्बर, 1996, पृ0–34–35*
7. *कमल अरुण – सबूत, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–1999, पृ0–66*
8. *वही0, पृ0–61*
9. *कमल अरुण – पुतली में संसार, संस्करण–2004, पृ0–18*
10. *वही0, पृ0–18*
11. *वही0, पृ0–50*